हरियाणा की लोककथाएं

मूल्य : तीस रुपये (Rs. 30.00)
संस्करण : 2009 © राजपाल एण्ड सन्ज़
ISBN : 978-81-7028-364-5
HARYANA KI LOK-KATHAYEN (Folk Tales)
by Devishankar Prabhakar
राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली-110 006
website : www.rajpalpublishing.com
e-mail : mail@rajpalpublishing.com

हरियाणा की लोककथाएं

देवी शंकर प्रभाकर

राजपाल

क्रम

सूरजनारायण 7

सील्हड़ परी 13

टपका 17

'होई' माता–लँगड़ी गऊ 22

चौधर का डण्डा 27

भेड़-कुत्ते, सुर-असुर 32

चोर और साह 36

ढाँडा ढाई का 40

सूरजनारायण

एक सूरजनारायण था—सूरज-लोक का राजा। बहुत दयालु था सूरजनारायण। अपनी प्रजा का वह बहुत ध्यान रखता। अपनी प्रजा के हर व्यक्ति को दो-दो किलो अन्न नित्य देता। सारे राज्य में सुख था, शान्ति थी। उसके राज्य में कोई अपराध नहीं था, कोई द्वेष नहीं था, घूसखोरी नहीं थी। सूरजनारायण स्वयं घर-घर जाया करता।

सूरजनारायण जहाँ भी जाता, जिस वस्तु पर भी नज़र डालता, उसी में जीवन का संचार हो जाता। उसे गन्दगी पसन्द नहीं थी। जो भी सदा साफ-सुथरा रहता, उसे वह बहुत प्यार करता। उसकी माँ और बहू सफाई का ज़्यादा ध्यान नहीं रखा करतीं। इस बात से सूरजनारायण को दुःख होता। वह कहता, "सफाई जीवन है।" सूरजनारायण औरों को दो-दो किलो अन्न देता, परन्तु अपनी बहू और माँ को एक-एक किलो जौ ही देता। माँ, बहू खा लेतीं और सो जातीं। न बुहारी देतीं, न बर्तन साफ करतीं। घर को गन्दा रखतीं। एक-एक किलो जौ से भी उनका पेट नहीं भरता। भूखी रहतीं दोनों। एक दिन बहू सास से बोली, "सासूजी ! इतने जौ में काम नहीं चलता। अपने बेटे से कहो, अन्न और दे।"

"अच्छा बहू ! मैं आज ही कहूँगी।" सास ने कहा।

सास गई बेटे की कचहरी। कहने लगी, "अरे सूरजनारायण ! किलो जौ से कुछ नहीं बनता, और बढ़ा दे। भूख नहीं मिटती हमारी।"

"सवा किलो से काम चल जाएगा ना माँ ?"

"हाँ, सवा किलो कर दे।" और बुढ़िया वापस आ गई।

अब सवा किलो जौ मिलने लगे। दोनों का वही हाल। न घर साफ करें, न चूल्हा-चौका लीपें और न बर्तन माँजें। सवा-सवा किलो जौ से उनका पेट नहीं भरा, भूखीं की भूखी !

एक दिन बहू ने फ़िर कहा, "सासूजी ! सवा किलो भी थोड़ा है। डेढ़ किलो जौ करवा लें।"

फिर गई बुढ़िया बेटे की कचहरी। बोली, "अरे सूरजनारायण ! काम अब भी नहीं चला। डेढ़ किलो कर दे।"

"अच्छा माँ ! डेढ़ किलो ही मिल जाया करेगा।" कहते-कहते सूरजनारायण हँसा।

अब डेढ़ किलो जौ मिलने लगा था। परन्तु पेट अब भी नहीं भरता था सास-बहू का। वही रंग-ढंग दोनों के। घर गन्दा रहता। आलस्य-भरा जीवन था दोनों का। भूख थी कि मिटती ही नहीं थी। फिर गई बुढ़िया एक दिन बेटे के पास। वही भूख की शिकायत और अन्न की बढ़ोतरी की रट।

सूरजनारायण ने पाँच कंदु दिए माँ को। कहने लगा, "माँ ! अन्न तो और बढ़ेगा नहीं। प्रजा को दो किलो गेहूँ देता हूँ। मेरे घरवालों को डेढ़ किलो जौ ही मिलेगा। इससे अधिक दूँगा तो पाप है। ये पाँच कंदु हैं मेरे पास खेलने को। अन्य काम तो तुम दोनों के बस का नहीं, "कंदु खेल लिया करो।"

सास पाँच कंदु ले आई। बहू से बोली, "राजा है, फिर भी घरवालों का पेट नहीं भर सकता। औरों को तो दो किलो गेहूँ और

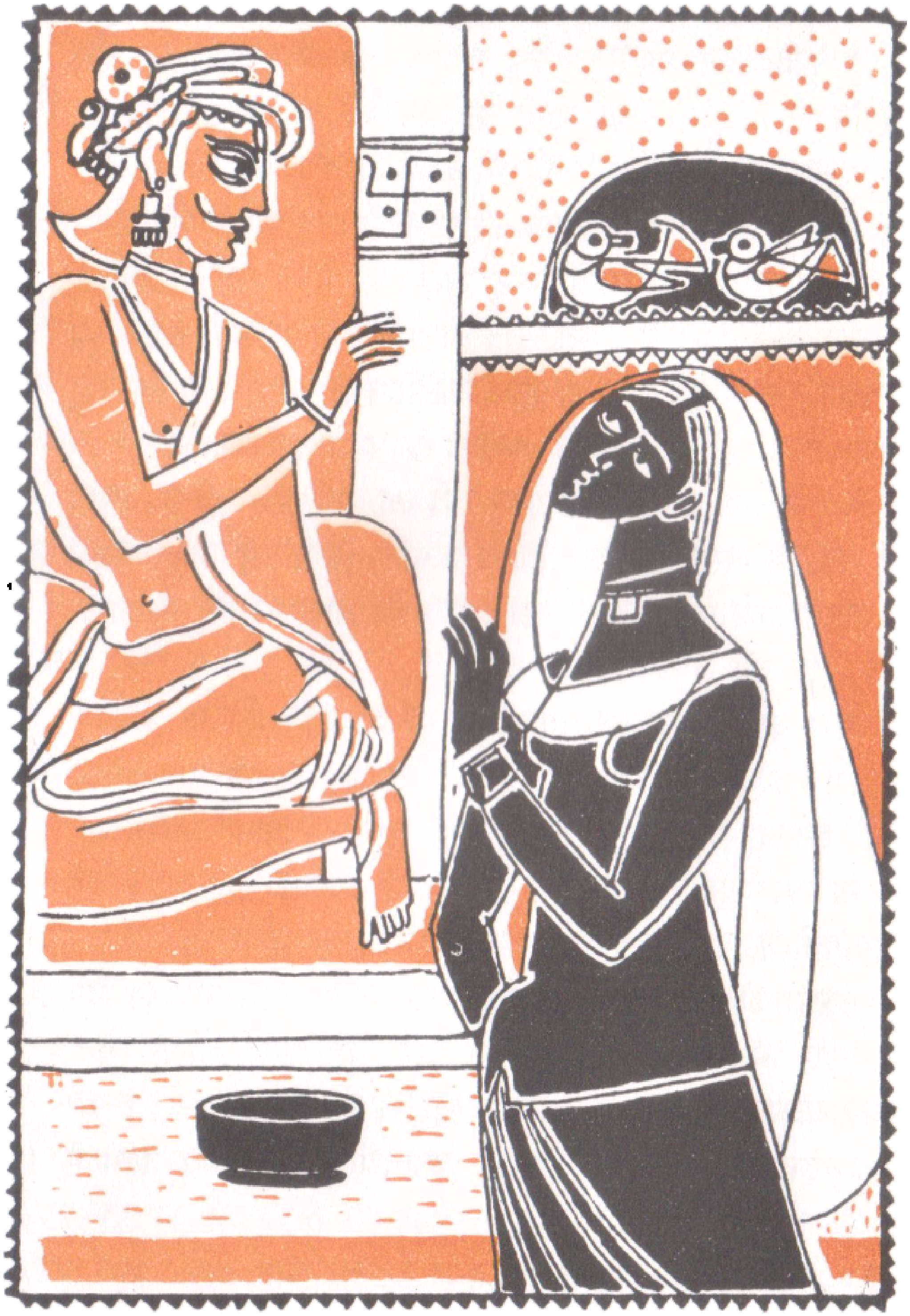

हमें डेढ़ किलो जौ ! अब दे दिए पाँच कंदु। इनसे खेलकर क्या भूख मिटेगी हमारी ?" सास ने कहा।

"अजीब आदमी है।" बहू ने मुँह बिचकाकर कहा, "राजा वना फिरता है। माँ और पत्नी का पेट भी नहीं भर सकता।"

"जा बहू ! तू खेल आ। मैं घर में हूँ।"

बहू गई पड़ोस में। रविवार का दिन था। पड़ोसिनों को जाकर कहा, "आओ री पड़ोसिनो, कंदु खेलें।"

पड़ोसिनें काम में व्यस्त थीं। बोलीं, "हमें फुरसत नहीं। तुम तो बेकार हो। आज सूरजनारायण का दिन है, और तू है कि कंदु खेलती फिर रही है। घर में कितना काम है आज !"

बहू ने देखा, सब अपने-अपने घरों को लीप-पोत रही हैं। बर्तन माँज रही हैं, बुहारी दे रही हैं। वह भागी-भागी घर आई। सास को बताई सारी बात। सास पड़ोस में गई। साथ के घरों में जाकर बोली, "ए बहू ! आग देना थोड़ी।"

"ले जा री, सूरजनारायण की माँ।"

बुढ़िया घुसी चौके में। देखकर दंग रह गई। इतना साफ-सुथरा घर है इनका, गऊ के गोबर से लीपा हुआ। चौका जगमग कर रहा था। घर का आँगन कंचन-सा और घर का द्वार चंदन-सा। बुढ़िया बोली, "अरी बहू ! क्या त्योहार है आज ?"

"सासूजी ! जानती नहीं, आज तेरे बेटे सूरजनारायण का दिन है। आए अठवार लीपें-पोतें, व्रत करें, पूड़े उतारें, खीर रांधे, सूरजनारायण को याद करके व्रत खोलें।"

बुढ़िया गई घर। उसे देखकर आश्चर्य हुआ कि बहू काम में जुटी है।

"क्या कर रही है बहू ?"

"सासूजी ! अगले अठवारे तक चन्दन-सा घर बनाऊँ। थाल

माँजूँ, कासण माँजूँ, इतवार को दोनों व्रत रखें। जाओ सासूजी ! अपने बेटे से कहो, "किलो जौ दे दे, किलो चावल दे दे, किलो गुड़ और किलो गेहूँ दे दे। जौ का धर्म करेंगे। चावल की खीर राँधेंगे। गुड़-गेहूँ के पूड़े उतारेंगे।"

बुढ़िया गई भागी-भागी बेटे के पास, "अरे सूरजनारायण ! किलो जौ, किलो चावल, किलो गुड़ और किलो गेहूँ दे दे।"

"क्या करोगी माँ ?"

"इतवार को व्रत रखेंगी। चन्दन-सा घर बनाएँगी। जौ का धर्म करेंगी। चावल की खीर राँधेंगी। गुड़-गेहूँ के पूड़े बनाएँगी।" बुढ़िया ने दोहराया।

सारा सामान मिल गया। दोनों हर इतवार व्रत रखतीं, सब कुछ करतीं। घर से गन्दगी गई तो दलिद्दर भी भागा। समृद्धि घर में आई। धन-धान्य से घर भर गया। इतना धन हो गया कि घर में समा नहीं सका।

बुढ़िया गई बेटे की कचहरी, "अरे सूरजनारायण ! घर में धन नहीं समाता। देसोहड़ी जग (यज्ञ) करेंगे।"

"कर दो माँ !" सूरजनारायण मुस्कराया।

देसोहड़ी जग के लिए तैयारी हुई। दूर-दूर से लोग जग में आए। प्रजा जुड़ गई। जन-जन सास-बहू के गुणगान करने लगे, "कितना बड़ा यज्ञ है ! कभी देखा-सुना नहीं। हजारों का भंडारा है। कितने स्वादिष्ट पकवान हैं !"

परन्तु सूरजनारायण तो दोनों की परीक्षा लेने के लिए कटिबद्ध थे। एक बूढ़े का रूप धारण कर वे आ गए—यज्ञ-स्थली पर। सब भोजन कर रहे थे, परन्तु वह बूढ़ा तो चुप बैठा था एक तरफ। बुढ़िया आई उसके पास। कहने लगी, "बूढ़े बाबा ! भोजन जीम लो।"

"स्नान करके सूरजनारायण के थाल में जीमूँगा। उसकी बहू कमर मलेगी।"

बहू सुन रही थी। सोचा बूढ़ा जिद्दी है। सास से बोली, "कोई बात नहीं माँजी ! ऐसा ही सही।"

बूढ़ा सूरजनारायण की चौकी पर बैठकर नहाया। बहू ने कमर मली। फिर बूढ़े ने सूरजनारायण के थाल में भोजन किया और खूब खाया-पीया। हाथ धोते-धोते कहने लगा, "मैं तो सूरजनारायण के पलंग पर सोऊँगा। बहू पंखा झलेगी और पैर दबाएगी। नहीं तो यज्ञ को शापित कर दूँगा।"

"जा ! जा ! काम कर !" बुढ़िया बोली।

बहू कुछ-कुछ भाँप गई थी। सास से बोली, "कोई बात नहीं सासूजी ! यह भी सही।"

बूढ़ा पलंग पर लेटा, एकान्त में। बहू ने पंखा झला, पैर दबाए। सूरजनारायण अपने असली रूप में आ गए। बहू आत्मविभोर हो उठी। आज उसके पति ने उसे भरपूर स्नेह दिया था। समय आने पर बहू ने चाँद-से बेटे को जन्म दिया। सास बोली, "बहू कलंकिनी है। मेरा बेटा तो कभी आया ही नहीं। लड़का बूढ़े का है।"

सूरजनारायण ने गूढ़ मुस्कान के साथ माँ से कहा, "कोई बात नहीं। परीक्षा हो जाए। कच्चे धागे से कच्चा बरवा कुएँ में फाँस दे। पानी भरा न आवे तो बेटा बूढ़े का, नहीं तो मेरा।"

सारे राजे बुलाए गए। प्रजा आई। बहू ने कच्चे धागे से कच्चा बरवा बाँधा। बाएँ हाथ फाँस दिया, दाएँ हाथ से खींच लिया। धागा टूटा नहीं, बरवा फूटा नहीं। बहू परीक्षा में सफल हो गई। सारे जगत में उसकी सराहना हुई।

सील्हड़ परी

एक राजा था। इन्द्र-सभा की पाँच परियाँ रात-बिरात उसके पास आया करतीं। पाँचों परियाँ कला-पारखी राजा के सम्मुख नृत्य करतीं, गातीं-बजातीं। उन पाँचों परियों में एक परी का नाम था सील्हड़ परी।

वे चोरी-छिपे ही आया करतीं पृथ्वी पर। वे जानती थीं कि जिस दिन भी इन्द्रपुरी के किसी भी वासी को थोड़ा भी पता चल गया कि वे पृथ्वी पर जाया करती हैं तो उनकी खैर नहीं। इन्द्र देव उन्हें जीवित गड़वा देंगे।

पाँचों परियाँ इतना खतरा मोल लेकर भी क्यों आया करती थीं पृथ्वी पर, यह एक ऐसा रहस्य था जिसका भेद था राजा की वीणा में। राजा इतना अच्छा वीणा-वादक था कि पाँचों परियाँ उसका वीणा-वादन सुनकर मन्त्रमुग्ध हो जातीं। वे सुध-बुध भूल जातीं और उनके पाँव आप ही आप थिरक उठते। इन्द्र-सभा के वादकों में कोई भी तो उसकी टक्कर का नहीं था।

इन्द्र-लोक के वातावरण से उकताकर ही तो कभी-कभी वे रात के अँधेरे में निकल पड़तीं—अपनी धरती के दर्शन को। इसी धरती से तो वे इन्द्र-सभा में लाई गई थीं ताकि देवों का मनोरंजन कर सकें।

और एक दिन जब वे अपने विमान में बैठीं धरती का चक्कर लगा रही थीं तभी तो उनके कानों में उस वीणा-वादक के मधुर स्वर झंकरित हुए थे पहली बार। वह अपने उद्यान में बैठा वीणा बजा रहा था। आधी रात बीत चुकी थी। पूर्णिमा की दूधिया चाँदनी बिखरी पड़ी थी चारों तरफ। एक शिला पर बैठा वह समाधिस्थ हो वीणा बजाए जा रहा था। पाँचों परियाँ धीरे से उद्यान में उतरीं और उसकी वीणा के स्वरों में खो गईं। सहसा पता नहीं कब उनके पाँव आप ही आप थिरक पड़े। पाँचों नृत्य में मग्न हो गईं।

राजा ने जब घुँघरुओं की झनकार सुनी तो चौंका। सामने देखा तो देखता ही रहा गया। गुलाब की पंखड़ियों-सी पाँच परी आत्म-विभोर हो वीणा के स्वरों के साथ एकरूप हो नृत्य-मग्न थीं और उस दिन के बाद राजा और पाँचों परियों में एक अटूट सम्बन्ध बन गया। परियाँ रात को अँधेरे-अँधेरे आतीं और दिन निकलने से पहले इन्द्रलोक लौट जातीं।

'सील्हड़' परी सबसे छोटी और सुन्दर थी। गुड़िया-सी उस परी को राजा सूरजमूखी कहा करता। जब सब परियाँ लौटने की जल्दी करतीं तो उसे किसी न किसी कारण से देर हो जाती। इसीलिए तो घर से वे उसे 'सील्हड़' कहतीं। वास्तव में सील्हड़ परी का मन ही नहीं करता वापस जने को। वह तो राजा के समीप ही रहना चाहती।

जिस रात की यह बात है उस रात भी पूर्णिमा थी। राजा ने उस दिन अपनी कला का ऐसा प्रदर्शन किया था कि सभी परियाँ अभिभूत थीं, आत्मविभोर थीं। सहसा भोर के प्रकाश को देख परी घबराईं। चार जनी तो जल्दी-जल्दी अपने उड़न-खटोलों में बैठ उड़ चलीं, परन्तु सील्हड़ परी को इस सबका भान नहीं था। राजा और सील्हड़ परी जैसे सब कुछ भूल गए थे। उन्हें तब होश आया जबकि

चारों दिशाओं में सूर्य का प्रकाश फैल गया। सील्हड़ परी को जब यह पता चला तो वह हैरान रह गई। दिन निकलने पर मृत्यु लोक से उसका उड़न-खटोला कैसे उड़ सकता था। सील्हड़ परी को इस धृष्टता के लिए मृत्युदण्ड तक दिया जा सकता था।

"अब क्या हो ?" राजा ने कहा।

"एक ही तरीका हो सकता है महाराज ! यदि कोई व्यक्ति एकादशी का निर्जल व्रत करता हो, वह मेरे उड़न-खटोले को छू दे तो मेरा उड़न-खटोला दिन में भी उड़ सकता है।"

सारे नगर में ढिंटोरा पीटा। कोई भी तो नहीं मिला ऐसा व्यक्ति पूरे शहर में। बड़ी विकट समस्या थी। अब क्या करें ? तभी सील्हड़ परी ने कहा, "महाराज ! अपनी दासी को बुलाओ। उसने रखा है एकादशी का निर्जल व्रत।"

दासी आई। दासी ने उड़न-खटोला को छू दिया और वह सील्हड़ परी को ले इन्द्रलोक को उड़ चला।

टपका

✤✤✤✤✤✤

एक धोबी था जो अमीर वज़ीरों के कपड़े धोया करता। धोबी आखिर धोबी ही था—एक गरीब मज़दूर। वह बस्ती के बाहर एक झोंपड़ी में रहता।

सावन-भादों की एक ज़ोरदार बरखा चल रही थी। धोबी की झोंपड़ी बहुत पुरानी थी। हर समय टपके का डर बना रहता। अमीर वज़ीरों के कपड़ों पर टपका पड़ जाए तो आ गई भारी आपत्ति ! टपके का दाग धुलता भी तो नहीं। उस दिन धोबी धोबिन से कह रहा था, "बड़े जोर की बरखा हो रही है। मुझे इतना डर शेर का नहीं जितना टपके का है।"

यह बात सुनी शेर ने जो धोबी की झोंपड़ी के पिछवाड़े खड़ा था। शेर ने सोचा, 'यह टपका तो मेरे से भी जोरदार हुआ। धोबी को मेरा इतना डर नहीं जितना टपके का है।'

उधर एक कुम्हार का गधा खो गया था। घटाटोप अंधेरा। हाथ को हाथ नहीं सूझे। कुम्हार अपने गधे को खोजता आ गया धोबी की झोंपड़ी के पिछवाड़े। अंधेरे में उसका हाथ शेर पर पड़ा। उसने समझा, उसका गधा ही खड़ा है। उस पर चढ़ बैठा और दो डंडे जमाए। साथ ही कड़ककर बोला, "गधे की औलाद ! यहां छिपा खड़ा है। तेरी ऐसी गति बनाऊं कि याद करे सारी उम्र।"

इतना कहकर उसने दो-चार डंडे और टिकाए कनपटी पर। शेर ने सोचा, आ गया टपका। अब खैर नहीं। वह सरपट दौड़ा।

कुम्हार ने मन ही मन सोचा, 'गधा मेरे वाला तो है नहीं। वह तो मरियल था। यह कैसा हृष्ट-पुष्ट है। बिजली की तरह दौड़ता है। खूब हाथ लगा।' शेर जंगल की तरफ दौड़ा जा रहा था। सहसा बिजली चमकी। बिजली के प्रकाश में कुम्हार ने देखा और सन्न रह गया। फिर बिजली चमकी। कुम्हार ने गौर से देखा। उसे पूर्ण विश्वास हो गया कि वह गधे पर नहीं, शेर पर बैठा है। उधर शेर था कि तेज़ी से भागा चला जा रहा था। अजीब बात थी कि शेर कुम्हार से डर रहा था और कुम्हार शेर से।

कुम्हार सोच रहा था, कैसे जान बचे। रास्ते में एक बरगद का पेड़ था। उसकी दाढ़ी धरती तक लटक रही थी। शेर जब बरगद के पेड़ के नीचे से गुज़रा तो कुम्हार ने उचककर दाढ़ी पकड़ ली। शेर को अपनी पीठ हल्की लगी तो संतोष हुआ और वह अधिक वेग से भागा। वह सोच रहा था, कहीं टपका फिर न आ दबाए।

उधर कुम्हार ने सोचा कि वह छिप जाए बरगद की खोह में। सो उसने बरगद की एक खोखली जगह खोजी और छिपकर बैठ गया। वह सोच रहा था, 'रात यहीं काट लूं। बरगद पर शेर चढ़ नहीं सकता। तड़के उठकर घर चला जाऊंगा।'

उधर शेर था कि भागा जा रहा था। टपके का भय बैठा हुआ था दिल में। आगे मिला बन्दर। शेर की इतनी बुरी दशा देखकर बन्दर ने कहा, "मामा ! मामा ! क्या बात है ? कहाँ भागे जा रहे हो ?"

"भाग ले भानजे ! जंगल में टपका उतर आया है।" शेर ने हाँफते हुए कहा।

"मामा ! क्या बात करते हो। टपके से डर गए। मैं तो टपके

को बड़े चाव से खाया करता हूँ।" बन्दर ने हँसकर कहा।

"अरे भानजे, यह वह टपका नहीं है। बहुत भयंकर बला है। कनपटियों पर ऐसे डण्डे जमाए कि मुझे नानी याद आ गई।" शेर ने गहरी साँस लेकर कहा।

"मामा ! दिखाओ तो सही, कहाँ है वह टपका ?"

"बन्दर ही रहे ! शरारत किए बगैर नहीं रहोगे, चलो।"

दोनों बरगद की ओर चले। कुम्हार ने भोर के प्रकाश में देखा, शेर बन्दर के साथ आ रहा है। उसने अनुमान लगाया, 'बन्दर ऊपर से नीचे धकेलेगा और शेर खाएगा।' वह बरगद की खोह में छिपकर बैठ गया। सिर पर पत्ते रख लिये।

शेर बरगद के नीचे खड़ा था। प्रकाश फैल रहा था, इसी कारण शेर उतना डर नहीं रहा था। सोचता था, यदि टपका आ ही गया तो भाग खड़ा होऊँगा। बन्दर चढ़ गया बरगद पर। वह बरगद के बरमट (फल) तोड़-तोड़ कर नीचे फेंकता और कहता, "मामा ! क्या यह है टपका ?"

"भानजे ! जब टपके के काबू आएगा तो तेरे देवताओं को भी पता चल जाएगा।" शेर ने कहा।

अब बन्दर की उल्टी जात। उछलता-कूदता जा बैठा वहाँ, जहाँ कुम्हार छिपा बैठा था, खोह में। उसकी पूँछ से पत्ते हट गए। कुम्हार ने सोचा, आ गया सिर पर दुष्ट। अब क्या करे। बन्दर की पूँछ खोह के भीतर कुम्हार के मुँह के सामने लटक रही थी। कुम्हार ने सोचा—'बहुत बढ़िया अवसर हाथ लगा है। अवसर चूक गए तो फिर क्या बात बनी।' उसने बन्दर की पूँछ को जकड़ लिया दोनों हाथों से।

अब बन्दर जब वहाँ से उछलकर दूसरी टहनी पर जाने का प्रयत्न करने लगा तो हिला न जाए वहाँ से। पूँछ भारी लगे। उधर

शेर ने कहा, ''क्यों भानजे ! क्या हाल है ?''

अब बन्दर और भी डर गया। उसने पूँछ छुड़ाने के लिए ज़ोर लगाया। कुछ ज़ोर लगा बन्दर का और कुछ ज़ोर लगा कुम्हार का। पूँछ उखड़वा बैठा बन्दर और धम से आ पड़ा नीचे। शेर पहले ही भाग खड़ा हुआ था। बन्दर भी उठकर भागा। दोनों भागते-भागते दूर निकल आए। शेर बोला, ''क्यों भानजे ! आ गया काबू टपके के ?''

''मामा ! कौन कहता है, वह टपका था। वह तो पूँछ-उखाड़ था।''

'होई' माता—लँगड़ी गऊ

एक था राजा। राजा के सात बेटे थे और एक थी राजकुमारी। सातों राजकुमारों का ब्याह हो गया सातों भाभियाँ अपनी सुन्दर-सी, नन्हीं-सी ननद को बहुत प्यार करतीं। सबसे अधिक प्यार बड़ी बहू करती थी राजकुमारी से।

कार्तिक मास की पहली सप्तमी का दिन था। उस दिन सातों भाभियाँ अपनी ननद को साथ ले चूल्हे-चौके के लिए मिट्टी लेने गईं। खदान में मिट्टी खोदने लगीं सब। नन्हीं राजकुमारी सबसे आगे खदान के एक कोने में मिट्टी खोद रही थी। दुर्भाग्य की बात कि उसकी खुरपी से 'होई' के सात बच्चे कट गए। 'होई' ने राजकुमारी का पल्ला पकड़ लिया, बोली, ''तुमने मेरे बच्चे काटे हैं। मैं शाप दूँगी तुझे।''

सब हैरान थीं। नन्हीं राजकुमारी रोने लगी। वह बहुत डर गई थी। ननद की यह दशा देखकर बड़ी भाभी आगे आई। बड़े नम्र भाव से उसने होई माता के चरण छुए और प्रार्थना की, ''हे होई माता ! तू बड़ी दयालु है। नन्हीं ननद को क्षमा कर दे।''

होई माता क्रोध से पागल-सी हो उठी। उसके सात बच्चों का खून जो हुआ था। गरजकर बड़ी भाभी से वोली, ''मैं इस हत्यारी को क्षमा नहीं करूँगी। इसने मेरे सात बच्चे काट दिए।''

थोड़ी देर सब चुप थीं। तभी बड़ी बहू ने पैर पकड़कर होई माता से निवेदन किया, "माँ ! ननद का पल्ला छोड़ दे। दोष मेरा है। मैं इसे साथ ले आई। यह तो अबोध है, बच्ची है। शाप मुझे दे दे।"

"तो सुन ! तू सारा जीवन बाँझ रहेगी।" इतना कह होई माता अंतर्धान हो गई।

समय बीतता चला गया। सभी बहुओं के घरों में बाल-गोपालों की पैंजनियों की रुन-झुन थी। परन्तु बड़ी बहू का आँगन सूना था। सब उसे बाँझ कहकर चिढ़ाते थे।

बड़ी बहू किसी से न तो बहुत बोलती, न ही किसी को जवाब देती। वह एक लँगड़ी गऊ की सेवा में लीन रहने लगी। उसे पुचकारती, सहलाती, चारा खिलाती। लँगड़ी गऊ बड़ी बहू का सेवा-भाव देखकर बहुत अभिभूत हुई। उससे बहू का दुःख देखा न जाता। एक दिन उसने रानी से पूछ ही लिया। बड़ी बहू ने बताया, "होई माता ने मेरी कोख छीन ली, गऊ माता ! मेरी ननद से होई के बच्चों की हत्या हुई। होई माँ ननद की कोख छीन रही थी। मैंने कहा—माँ ! मेरी कोख ले ले, ननद का पल्ला छोड़ दे। और माँ ने उसे तो क्षमा कर दिया। मुझे शाप दे दिया। बड़ी दयालु है होई माँ। मेरी ननद का घर-आँगन आज बच्चों की पैजनियों की रुन-झुन से गूँज रहा है। यही क्या मेरे लिए खुशी की बात नहीं माँ !"

लँगड़ी गऊ बड़ी बहू की करुण-कथा सुनकर भाव-विभोर हो उठी। वह सोच रही थी, "कितनी महान है यह औरत जिसने ननद के लिए अपनी कोख का बलिदान कर दिया !"

लँगड़ी गऊ ने मन ही मन एक संकल्प लिया, 'आखिर बड़ी

बहू के लिए मुझे कुछ करना चाहिए।' वह सोच रही थी। लँगड़ी गऊ अपनी बहिन होई माता के पास गई। इधर-उधर की बात होने के उपरान्त होई ने आने का कारण पूछा।

"मैं एक काम से आई हूँ छोटी तेरे पास।" लँगडी गऊ बोली।

"कहो ना बहिन! जो भी आपका आदेश होगा, पालन करूँगी।"

"तो सुन छोटी! जिसकी कोख छीनी है ना तूने उसकी कोख वापस कर दे।" लँगड़ी गऊ ने दृढ़ता से कहा।

"आप बड़ी बहू की बात कह रही हैं ना?" होई ने प्रश्नसूचक ढंग से कहा।

"हाँ छोटी! मैं उसी महान नारी के बारे में कह रही हूँ, जिसने ननद की कोख के लिए अपनी कोख का बलिदान कर दिया। जिसने वर्षों मुझ अपंग की सेवा की, वह नारी नहीं, करुणा और ममता की देवी है होई!" लँगड़ी गऊ कहती गई।

होई को ऐसा महसूस हुआ कि जैसे उसने बड़ी बहू को शाप देकर बहुत बड़ा अपराध किया है। उसे अपने-आपसे ग्लानि-सी हुई और बोली, "बहिन, मुझे क्षमा कर दे। मैं बड़ी बहू की कोख लौटा रही हूँ।"

दस महीने बीते। होई का पर्व आया, वही कार्तिक की पहली सप्तमी। बड़ी बहू के आँगन का बिरवा हरा हो गया। पैंजनियों की रुन-झुन थी। ब्राह्मण होई निकालने आए। नाइन बर्तन माँजने आई। घर को लीपा-पोता, सजाया-सँवारा।

उधर सास बेखबर। कोई पता नहीं उसे। सास ने बाँदी से कहा, "जा री! होई का त्योहार है। एक तेल की पली और गुड़ की डली दे आ उस बाँझ के घर भी।"

बाँदी गई। घर को देखकर दंग रह गई। नन्हा-सा शिशु खेल रहा है। आँगन का बिरवा हरिया गया है। सारे राजमहल में यह शुभ समाचार एक पल में फैल गया। बधाई-गीत गाए जाने लगे।

लँगड़ी गऊ आँगन में दाल के कूँड़े में मुँह डाले मन-ही-मन प्रसन्न थी, आह्लादित थी। उसने छोटी को धन्यवाद दिया।

चौधर का डण्डा

एक बार जंगल में गीदड़ों और कुत्तों ने मिलकर फैसला किया कि वे साँझी खेती करेंगे। यह समाचार सारे जंगल में आग की तरह फैल गया। सभी वन-प्राणी इस नए गठजोड़ से चकित रह गए।

लोमड़ों के चौधरी ने अपनी बिरादरी की पंचायत बुलाई और कहा, "वीर लोमड़ो ! ये गीदड़ अपने को बहुत चालाक समझते हैं। अब तक तो जंगल में चालाकी और बुद्धिमानी के लिए हमारी बिरादरी का ही नाम था। ये गीदड़ अब सबसे बुद्धिमान बनने चले हैं। गठजोड़ भी किया है तो कुत्तों के साथ, जिनका न कोई धर्म है, न ईमान। कुत्तों की आपस में ही नहीं बनती। एक-दूसरे को नोच लेने को तैयार रहते हैं !"

लोमड़ों में सबसे खतरनाक था काना लोमड़। उसने कहा, "बोने दो साँझी खेती। देख लेना, क्या दशा होती है गीदड़ों की। मैं सब बंटाधार न कर दूँ तो मुझे काना लोमड़ कौन कहेगा !"

इधर गीदड़ों और कुत्तों की मैत्री के नारे लग रहे थे। सारे जंगल में इन आवाज़ों का शोर था, कोलाहल था। इस शोर को सुनकर जंगल का राजा शेर अपने मन्त्री लकड़बग्घे से कह रहा था, "बड़ी बेमेल मैत्री है !"

"यह मैत्री चल नहीं सकेगी, महाराज ! दोनों जन्मजात शत्रु हैं। इधर लोमड़ों ने फैसला कर लिया है कि इस मैत्री को सिरे नहीं चढ़ने देंगे।"

राजा आश्वस्त हुए और अपने शयन-कक्ष में चले गए।

गीदड़ों और कुत्तों ने मिलकर धरती जोती। बुवाई की। रखवाली का काम कुत्तों ने सँभाला। गुड़ाई और सिंचाई का काम दिन में गीदड़ करते। हरे-हरे पौधे लहलहाने लगे। अपनी सफलता पर गीदड़ और कुत्ते आनन्द से नाचने लगते।

जब फसल पककर तैयार हुई तो एक दिन चुपके से काने लोमड़ ने फसल में घुसकर काफी सारी पकी बालियाँ चुरा लीं। अगले दिन इस चोरी की बात को लेकर दोनों पक्षों में थोड़ा मन-मुटाव हुआ।

उसके बाद दूसरे दिन फिर चोरी हो गई। दोनों पक्ष एक-दूसरे पर आरोप लगाने लगे। उसी दिन काना लोमड़ कुत्तों के चौधरी से एकान्त में मिला और कहा, "गीदड़ कौम बहुत बेईमान है। चोरी उन्होंने ही की है।"

"चलो जो हुआ। हम मैत्री के नाम पर धब्बा नहीं लगाना चाहते, क्योंकि पहले ही हमारी जाति बदनाम है।" चौधरी ने कहा।

"फिर भी गीदड़ों को पाठ पढ़ाना चाहिए। आखिर कुत्ते उनसे ऊंची बिरादरी के हैं। गीदड़ सदा उनसे डरते आए हैं।" काने लोमड़ ने कहा।

"परन्तु लड़ेंगे या पीटेंगे तो जंगल के प्राणी हँसेंगे।"

तभी काने लोमड़ ने चौधरी के पास सरककर उसके कान में कुछ कहा। चौधरी के मुख पर थोड़ी-सी मुस्कान फैल गई। कहने लगा, "युक्ति तो ठीक बताई तुमने लोमड़ भाई !"

फसल की गहाई, बरसाई के बाद अनाज की ढेरी तैयार हो

कुत्ते गीदड़
भाई-भाई
कुत्ते गीदड़
भाई-भाई

गई। इस अवसर पर सारे गीदड़ और कुत्ते वहाँ उपस्थित थे। इस बात पर बहस हो रही थी कि बँटाई कैसे हो ? तभी कुत्तों के चौधरी ने सुझाव दिया, "गीदड़ अपना एक चौधरी चुन लें। वह जो फैसला करेगा, हमें मंजूर होगा।"

कई गीदड़ एक स्वर में बोले, "हम सभी चौधरी हैं। हमारी बिरादरी में एक चौधरी नहीं चुना जाता।"

"परन्तु इस काम के लिए तो चुनना ही पड़ेगा।" चौधरी कुत्ते ने कहा। सारे गीदड़ हू-हू करने लगे। तभी सबसे बलिष्ठ एक गीदड़ ने कहा, "क्या हू-हू लगा रखी है। रहे गीदड़ के गीदड़ ! शोर मचाना जानते हो, काम की बात करते नहीं। कुत्तों ने अपना चौधरी चुन रखा है तो तुम क्यों पीछे रहो ? चुन लो अपना चौधरी। आखिर चुनाव का ज़माना है। आज के युग में सब काम चुनाव से सम्पन्न होते हैं।"

कुत्तों के चौधरी ने गीदड़ों को सम्बोधित करते हुए कहा, "इन्हीं को चुन लो। सबसे मोटे-तगड़े हैं।"

गीदड़ फिर हू-हू करने लगे। उस हू-हू को ही सहमति समझकर कुत्तों के चौधरी ने घोषणा कर दी कि वही मोटा गीदड़ गीदड़ों का चौधरी है। अब बोले कौन ? सब डरे कुत्तों से। मोटा गीदड़ मन-ही-मन बहुत खुश था कि वह आँख झपकते ही गीदड़ों का चौधरी बन बैठा था।

तभी कुत्तों के चौधरी ने एक डण्डा मँगवाया। मोटा गीदड़ डरा—कहीं पिटाई न हो जाए। चौधरी ने उसके भाव भाँपते हुए कहा, "डरो मत मोटे ! यह चौधर का डण्डा है। तुम्हारी पूँछ से बाँध देंगे इसे। इस डण्डे को जहाँ मार दोगे, अनाज की ढेरी पर वहीं से बँटवारा हो जाएगा।"

मोटा गीदड़ जब अनाज की ढेरी पर डण्डा मारने बढ़ा तभी

कुत्तों ने हल्ला बोल दिया। गीदड़ भाग खड़े हुए। जिसका जिधर मुँह उठा वह उधर ही भागा जा रहा। चौधरी गीदड़ अपनी खोह की तरफ भागा। कुत्ते उसका पीछा कर रहे थे। जब वह खोह में घुसने लगा तो चौधर का डण्डा बाहर अटक गया। भीतर से गीदड़ी घबराई हुई बोली, "अजी, भीतर आ जाओ ना। ये दुष्ट तुम्हें उधेड़ देंगे।"

मोटा गीदड़ डर के मारे बोल ही नहीं रहा था। केवल भीतर घुसने के लिए जोर लगा रहा था।

"क्या बात है ? भीतर क्यों नहीं आते ?"

बाहर काना लोमड़ सुन रहा था, बोला, "भाभी ! भीतर कैसे घुसे ? चौधर का डण्डा अड़ा है।" इतना कह वह ज़ोर से हँस दिया।

भेड़-कुत्ते, सुर-असुर

****

देबू ने दादी से एक बार सवाल किया, "दादी ! भेड़ों के तो झुण्ड के झुण्ड फिरते दिखाई देते हैं और कुत्ते कहीं-कहीं दिखते हैं जबकि एक-एक बार में सात-सात पिल्ले पैदा होते हैं—भेड़ों से भी अधिक।"

दादी बोली "देबू ! बात तो बड़ी पते की है।"

"तो इसका कारण तो बताओ दादी ?"

"इस बारे में एक कहानी है देबू ! ले तुझे सुनाए देती हूँ।" और दादी ने देबू को कहानी यों सुनाई :

एक बार एक राजा ने अपने बुद्धिमान मन्त्री से भी यही प्रश्न किया था, "मन्त्री जी ! भेड़ों और कुत्तों की पैदा होने की दर में तो कुत्ते बहुत आगे हैं, परन्तु भेड़ों के झुण्ड देखने में आते हैं, और कुत्ते हैं कि कहीं-कहीं एक-आध ही दीखते हैं। इसका कारण क्या है ?"

मन्त्री ने कहा, "महाराज ! इस बात का उत्तर आपको मिल जाएगा।"

मन्त्री ने राजा के सामने साँझ के समय एक कोठे में बीस कुत्ते बन्द करवा दिए और उनके बीच रोटियों से भरी एक टोकरी रखवा दी। एक दूसरे कोठे में बीस भेड़ें बन्द करवा दीं और चारे की एक टोकरी बीच में रखवा दी। दोनों कोठों को बाहर से बन्द करवाकर लौट पड़े दोनों।

प्रातःकाल मन्त्री राजा को लेकर वहाँ आया। पहले कुत्तों वाला कोठा खुलवाया। राजा ने देखा बीसों कुत्ते आपस में लड़-लड़कर जान दे चुके थे और रोटियों की टोकरी ज्यों की त्यों रखी थी। कोई कुत्ता एक भी रोटी नहीं खा सका था। फिर मन्त्री ने खुलवाया भेड़ों वाला कोठा। राजा ने देखा—बीसों भेड़ें एक-दूसरे के गले पर मुँह टिकाए आराम से सो रही थीं और चारे की टोकरी खाली थी।

मन्त्री ने कहा, "अन्नदाता ! कुत्ते एक रोटी नहीं खा सके और लड़-लड़कर मर गए। इधर भेड़ें हैं कि सबने बड़े प्रेम से चारा खाया और एक-दूसरे से गले लगकर सो गईं। यही तो कारण है कि भेड़ों के वंश में वृद्धि है, समृद्धि है। उधर कुत्ते हैं जो एक-दूसरे को सहन नहीं कर सकते हैं। जिस बिरादरी में इतनी घृणा और द्वेष हो, वह कैसे बढ़ सकती है ?"

दादी यह कहानी सुनाकर कहने लगी, "देबू ! अब सो जा रे।"

"यह तो छोटी कहानी थी दादी ! एक और सुनूँ तो नींद आए।"

दादी को एक जन-कथा याद हो आई। वह बोली, "अच्छा सुन रे देबू ! एक और कहानी है इसी तरह की—देवताओं और असुरों के बारे में है।"

देबू बोला, "सुनाओ दादी !"

एक महात्मा थे। उन्होंने सुरों और असुरों की एक सभा बुलवाई। सारे सुर-असुर आ जमे महात्मा के आश्रम पर। महात्मा ने वैसे तो दोनों समुदायों की बराबर की आवभगत की, परन्तु सुरों के प्रति उनके मन में अधिक श्रद्धा और सम्मान था।

असुरों ने भाँप लिया कि महात्मा के मन में सुरों के प्रति अधिक मान-सम्मान है। दिखावे के लिए ही वह बराबर का बर्ताव कर रहा है। असुरों के चौधरी ने महात्मा को कहा, "देखो संतजी ! आप सुरों को अधिक महत्त्व देते हो, उनके प्रति आपके मन में अधिक सम्मान है। ऐसा था तो हमें क्यों बुलाया था ? हम तुम्हें

शाप देंगे ! तुम्हारा यज्ञ भ्रष्ट कर देंगे।"

महात्मा ने बहुत समझाया-मनाया, परन्तु असुरों का क्रोध शान्त नहीं हुआ। अब तो महात्मा ने भी संकल्प किया कि असुरों को इस बात का बोध कराना ही होगा कि वे सुरों की बराबरी नहीं कर सकते। महात्मा ने असुरों के चौधरी से कहा, "मुझे प्रसन्नता होगी यदि असुर सुरों सरीखे बन जाएँ, उनसे पीछे न रहें।"

"हम तो उनसे बहुत आगे हैं।" असुरों के चौधरी ने अकड़कर कहा।

"बुरा तो नहीं मानोगे, यदि परीक्षा हो जाए !" महात्मा ने कहा।

"हो जाए परीक्षा।" चौधरी ने कहा।

रात्रि-भोज पर महात्मा ने सुरों, असुरों सबके हाथों पर उँगलियों तक डण्डे बँधवा दिए ताकि दोनों हाथ मुड़ न सकें। पहले असुरों को भोजन के लिए बैठाया गया। उनके सामने तरह-तरह के मिष्टान्न, पकवान थालियों में परोसे गए। असुर थाली से तो कौर उठा लेते परन्तु मुँह में कैसे ले जाएँ ? यह एक समस्या हो गई उनके लिए। बहुत प्रयत्न किए, परन्तु कोई भी असुर भोजन जीमने में सफल नहीं हो सका। सब उठ गए।

अब बारी आई सुरों की। उनके हाथों पर भी पूरे डण्डे बँधे थे। हाथ मुड़ नहीं सकते थे। पंक्ति में बैठे सभी देवताओं के सम्मुख भोजन परोसा गया। देवताओं ने दो-दो की जोड़ी बना ली। एक देवता दूसरे को भोजन खिला रहा था। सभी असुर यह तमाशा देख रहे थे। उन्हें मानना पड़ा कि वास्तव में ही सुर असुरों से महान हैं।

दादी कहानी सुनाकर चुप हो गई। देबू ने कहा, "दादी ! सहयोग और आपसी प्यार ही देवताओं का गुण रहा ना ?"

"हाँ देबू ! यही गुण तो है जो देवता की पदवी दिलाता है इंसान को।"

"और इसीलिए तो मैं भेड़ का एक मेमना पालूँगा।" देबू बोला।

चोर और साह

✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱

गाँव के एक सेठ थे। कार्तिक मास में गाँव के लोग कपास के बदले उनसे घर की कई चीज़ें खरीदते। कोई तेल, तो कोई नमक, मिर्च, मसाले आदि। कपास का मौसम था। सेठ का कोठा कपास से भर गया।

उसी गाँव का रहनेवाला था एक चोर। सेठ के कोठे को कपास से भरा देखकर उसका मन ललचाया। उसने सोचा, क्यों न कपास की ही चोरी की जाए।

एक रात चोर घुस गया सेठ के मकान में। सेठ जाग रहा था। दालान में सेठ की चारपाई थी। सेठ जानबूझकर खर्राटे भरने लगा। चोर ने सोचा सेठ सो रहा है। उसने सेठ की चारपाई के पास अपनी नई सफेद चादर बिछा ली। वह कोठे में घुसा और कपास की पूरी खेप लाकर रख ली चादर पर। फिर गया भीतर कोठे में चोर।

अवसर पाकर सेठ चुपचाप दबे पाँव उठा और कपास के नीचे से चादर निकाल ली। चोर फिर आया कपास लेकर। चादर को अपने सिर के नीचे दबाए हुए सेठ खर्राटे भर रहा था।

चोर कपास निकालता रहा और ढेरी बनाता रहा। अँधेरे में उसे पता ही नहीं चला कि चादर नीचे नहीं है। जब उसने गाँठ

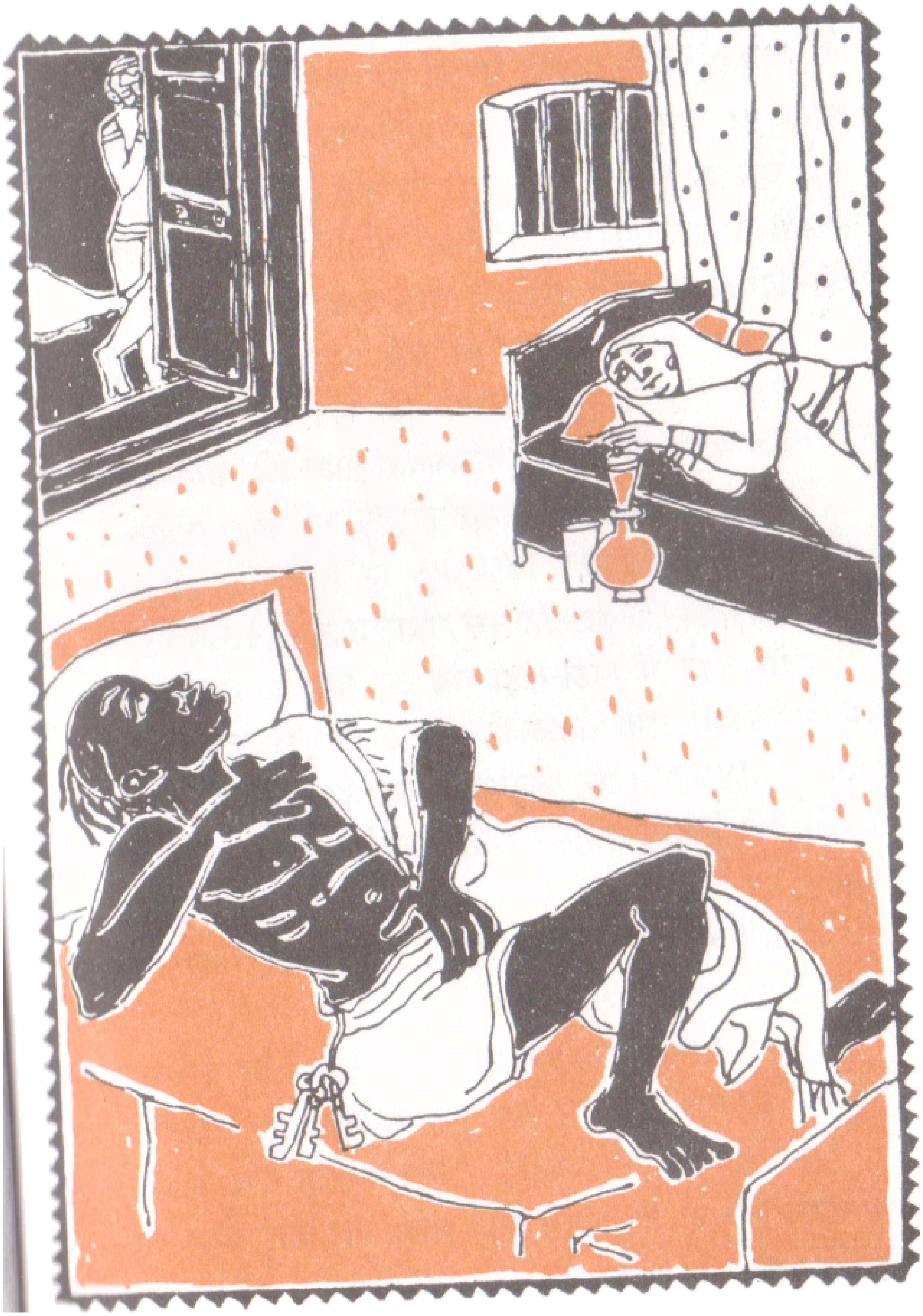

बाँधने के लिए चादर के पल्ले पकड़ने का प्रयत्न किया तो चादर हाथ ही न लगे। बहुत हैरान हुआ चोर। 'कहाँ लुप्त हो गई चादर ! बड़ी अचम्भे की बात है।' चोर सोच रहा था।

इतनी देर में सेठ ने सेठानी को आवाज़ दी, "सेठानी ! ज़रा आना मेरे पास। मुझे एक सपना आया है। अभी सुनाऊँगा।"

चोर कोने में छिपकर खड़ा हो गया। वह बहुत डर गया था। सेठानी ने अलसाए स्वर में कहा, "सोने दो मुरारी के बापू ! तुम्हें तो नींद आती नहीं। हमें भी तंग करते हो।"

"अरी भाग्यवान, सुन तो सही, बड़ा बढ़िया सपना है।"

"तो लेटे-लेटे सुना दो ना वहीं से।"

सेठ ने रजाई से मुँह निकालकर सपने की कहानी शुरू की :

"एक था चोर। सुन रही हो !"

"हाँ, आगे कहो।"

"तो चोर जो था, वह घुस गया चोरी करने सेठ के घर में।"

चोर कोने में खड़ा-खड़ा तंग आ गया था। वह समझ गया था, सेठ समय लेना चाहता है ताकि सुबह हो जाए और वह रँगे हाथों पकड़ा जाए। पर कोई चारा नहीं था। घर में सब जाग रहे हों तो कैसे निकले बाहर ? उधर सेठानी पूछ रही थी, "फिर क्या हुआ ?"

"अरी भाग्यवान होना क्या था ! चोर अनाड़ी था। नई सफेद चादर लेकर घुसा सेठ के घर में..."

चोर मन-ही-मन कुढ़ रहा था। उसे मूर्ख और बावला कहकर चिढ़ाया जा रहा था और वह कुछ भी नहीं कर सकता था।

सेठ ने बात आगे बढ़ाई, "और मूर्खता देख सेठानी, चोरी भी करने निकला तो कपास की। भला और कोई चीज़ नहीं मिली गधे को।"

"फिर क्या हुआ ?" सेठानी ने कहा। उसे सपने की कथा में रस आने लगा था।

"होना क्या था सेठानी ! कपास का ढेर चढ़ाने लगा चादर पर। जब ढेरी पूरी हो गई तो गाँठ बाँधने लगा कपास की, पर चादर तो वहाँ थी ही नहीं।"

"कहाँ चली गई ?"

"छूमन्तर हो गई।"

चोर को पूरा यकीन हो गया कि सेठ ने चादर खिसका ली है।

सेठानी पूछ रही थी, "फिर क्या हुआ ?"

"होना क्या था ? सेठ की नींद खुल गई। और उसने ज़ोर-ज़ोर से कहना शुरू कर दिया—चोर ! चोर ! चोर ! चोर !"

यह शोर होते ही छुपा हुआ चोर भागा और चिल्लाया :

"तू कहाँ का साह है ? मेरी दस रुपए की नई चादर हथिया ली तूने।"

"अब तो नहीं आएगा कभी ?" सेठ ने हँसते हुए कहा।

"कान पकड़े, सेठ !" गायब होते हुए चोर ने कहा।

ढाँडा ढाई का

✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱

एक बहुत निर्धन किसान था। उसने बड़ी मेहनत से डेढ़ सौ रुपए जोड़े। धरती बहुत कम थी उसके पास। सोचा, 'इन रुपयों से एक बैल खरीद लूँगा और दूसरे किसी छोटे किसान के साथ मिलकर काम कर लूँगा। एक बैल उसका और एक मेरा।'

कुछ दिनों में पास के कस्बे में पशु मेला लगा। वह बैल खरीदने मेले में गया। बहुत प्रयत्न किया परन्तु डेढ़ सौ रुपए में बैल अच्छी नसल का मिले कैसे ? बहुत कोशिश करने के बाद उसे एक ढाँडा (बूढ़ा) बैल मिल गया। परन्तु अच्छी नसल का होने के कारण ऐबदार जानवर नहीं था। किसान ने सोचा, 'ठीक रहेगा। काम ही तो लेना है।'

बैल खरीदकर वह अपने गाँव की ओर चल पड़ा। रास्ते में एक छोटी-सी ढाणी (बस्ती) पड़ती थी। किसान ने रैन बसेरे के लिए वहीं जगह चुनी और एक ज़मींदार के बाड़े में पहुँचा। लेकिन वह ठिकाना एक ऐसे आदमी का था जो ठगी और चोरी किया करता था। ठग के चार हट्टे-कट्टे लड़के थे—बड़े, चुस्त, बड़े चालाक !

चारों लड़कों ने देखा किसान भोला-भाला है। उसे आसानी से ठगा जा सकता है। उन्होंने किसान से बैल बेच देने को कहा। मोल-भाव होने लगा। किसान सोच रहा था कि बीस-तीस रुपए

का लाभ हो जाए तो बुराई ही क्या है। उसने बैल का मूल्य दो सौ रुपए कहा। ठग के लड़के यह रकम बहुत अधिक बता रहे थे।

तभी बड़े लड़के ने कहा, "चौधरी जी ! हमारे मोल-भाव का फैसला होता दिखता नहीं। बहुत फर्क है।"

"फिर कैसे हो ?" चौधरी ने कहा।

किसान को परेशान देखकर ठग के लड़के ने सुझाव दिया, "किसी बड़े सयाने को पंच मान लें। जितनी कीमत वह बताए वही निश्चित हो जाए।"

"तो फिर ढील कैसी ? हमारे बड़े-बूढ़े ताऊ तो बैठे ही हैं। यही फैसला कर दें।" भोले किसान ने बूढ़े ठग को लक्ष्य करके कह दिया। वह क्या जानता था कि अपने भोलेपन के कारण वह ठगों के जाल में फँसता जा रहा है। उधर ठग और लड़के बड़े खुश हुए मन-ही-मन। वे तो चाहते ही यह थे कि चौधरी किसी तरह बूढ़े ठग को ही मध्यस्थ मान ले। बूढ़ा ठग बात को पक्की करना चाहता था। उसने बेरुखी से कहा, "नहीं भई, मैं नहीं पड़ता झमेले में। बूढ़ा आदमी हूँ। राम का भजन करूँ, यही क्या कम है !" बूढ़े की लापरवाही का भोले-भाले किसान पर और भी प्रभाव पड़ा। उसने श्रद्धा से कहा, "ताऊजी आप बड़े हैं, सयाने हैं। जो मोल आप आँकेंगे, मुझे मंजूर होगा।"

"और हमें भी पूरी तरह स्वीकार होगा।" चारों लड़के एक स्वर से बोले।

बूढ़े ठग ने बड़ी गम्भीरता से शान्त स्वभाव दिखाते हुए कहा, "भई देखो अब तो तुम दोनों फरीक मान रहे हो। लेकिन कलियुग है, पंचों की मिट्टी पलीत होती है आज के ज़माने में। मैं तो यह पंचपना लेने को तैयार हूँ नहीं।"

"नहीं ताऊजी ! आप जो भी निर्णय देंगे, हम खुशी से मानेंगे।" किसान बोला।

"तो सुनो भई दोनों फरीक ! चाहे मैं जो भी फैसला दूँ, तुम्हें मानना होगा।"

सारे एक स्वर में बोले, "हाँ।"

बूढ़ा ठग किसान को गहराई तक निहारते हुए कहने लगा, "देख भई चौधरी, मैं तेरे बैल की कीमत दो पैसे बताऊँगा तो क्या करोगे ?"

"मैं वह भी मानूँगा।" किसान ने दृढ़ विश्वास के साथ कहा। उसे पूरा यकीन था, बूढ़ा बुजुर्ग जो करेगा, ठीक करेगा।

बूढ़े ने लड़कों को सम्बोधित करते हुए कहा, "भई छोकरो, मैं इस चौधरी के बैल की कीमत एक हज़ार आँकूँगा। क्या तुम मानोगे ?"

सबने एक स्वर में कहा, "हाँ।"

"तो ठीक है। मैं अभी फैसला किए देता हूँ।" इतना कह बूढ़ा ठग चारपाई से उठा और बैल को आगे-पीछे से देखने का नाटक करने लगा। उसने बैल के दाँत देखे। पूँछ को हाथ में पकड़कर मरोड़ा। नीचे-ऊपर टटोला। किसान को पूरा विश्वास था कि बैल के पैसे खरीद से कुछ अधिक आँकेगा ताऊ। ठग बैल को ऊपर-नीचे से देखभाल कर चारपाई पर आ बैठा। किसान बड़ी उत्सुकता से देख रहा था।

तभी बूढ़े ठग ने किसान से कहा, "देख भई चौधरी, तेरा ढाँडा ढाई का।" (अर्थात् तेरा बूढ़ा बैल कुल अढ़ाई रुपए का है।)

किसान हक्का-बक्का रह गया। उसको समझते देर नहीं लगी कि उसके साथ घोर विश्वासघात हुआ है। बूढ़ा न्याय की मूर्ति के स्थान पर धोखेबाज़ सिद्ध हुआ, परन्तु अब करे भी क्या ? वचन

दे चुका था। खून का घूँट पीकर रह गया। उसने चुपचाप अढ़ाई रुपए लिये और भारी कदमों से अपने गाँव का रास्ता पकड़ा।

घर पहुँचा तो चौधरिन ने पूछा, "बैल नहीं लाए ?"

लाया तो था। परन्तु ठगा गया रास्ते में। बहुत बड़ा धोखा हो गया मेरे साथ। लहू-पसीने की कमाई साफ हजम कर गए ठग।" चौधरी ने भारी मन से कहा।

"तुम तो बहुत समझदार आदमी थे। ठगे कैसे गए ?"

चौधरी ने पत्नी को सभी कुछ कह सुनाया। वह इस भोंडे विश्वासघात को सहन नहीं कर सका। रात को उसे नींद नहीं आई। ठगों को वह पाठ पढ़ाना चाहता था। सहसा उसे एक युक्ति सूझी। वह मन-ही-मन मुस्करा दिया।

अगले दिन अपनी पत्नी की बढ़िया वेशभूषा की पोटली बाँध वह चल पड़ा ठगों की ढाणी की तरफ। पत्नी बोली, "कहाँ चले ?"

"ठगों के चौधरी को सबक सिखाने।"

"कब तक लौटोगे ?"

"साँझ से पहले-पहले आ लूँगा।"

ठगों की ढाणी के पास एक जंगल था। वहाँ किसान ने अपनी घरवाली के कपड़े पहने, शृंगार किया। उसने ऐसा रूप बदला कि देखनेवाला उसे एक रूपसी समझे। औरत के वेश में वह ठगों के बाड़े में पहुँचा। बूढ़ा ठग और उसके चारों बेटे अपने घर एक औरत को आया देख बड़े खुश हुए। चारों में से किसी का विवाह नहीं हुआ था। ठगों के घर में कौन रिश्ता करे ? औरत रो रही थी घूँघट में। उसने करुण-कथा कही, "मुझे मेरे मरद ने घर से निकाल दिया। मेरा कोई ठौर-ठिकाना नहीं है।"

बड़े लड़के ने कहा, "तुम चिन्ता क्यों करती हो ? इस घर को भी अपना ही घर समझो।"

"परन्तु मैं यहाँ रह कैसे सकती हूँ ?"

"मुझसे विवाह कर लो।" बड़े ने कहा।

तभी तीनों लड़के भी बोल पड़े, "तुमसे क्यों कर ले विवाह ? हम क्या बुरे हैं ?"

चारों भाइयों का झगड़ा हो गया। बाप से किसी ने फैसला करने को नहीं कहा। उन्हें डर था कि बाप को मामला सौंप दिया तो फिर वही कह देगा, 'चलो मैं ही कर लेता हूँ विवाह।'

झगड़ा बढ़ा तो स्त्री बोली, "आप लोग लड़ क्यों रहे हैं ? मैं परीक्षा ले लेती हूँ।"

"हाँ, ठीक है।" चारों एक ही बार में बोल पड़े।

"तो सुनो। मेरे लिए शहर से जो बनारसी साड़ी, मथुरा के पेड़े और सहारनपुरी आम लेकर सबसे पहले लौटेगा, उसी से विवाह कर लूँगी।" औरत ने कहा।

अब क्या था, चारों छैला भाग खड़े हुए शहर की तरफ। बूढ़ा निहारे जा रहा था उसे। किसान ने जब देख लिया कि चारों बहुत दूर निकल गए हैं। तो झपाटे से स्त्री-वेश उतार, दरवाजा बन्द कर, बाँह से पकड़ा बूढ़े ठग को। बूढ़े ठग को समझते देर न लगी कि चौधरी है। अब खैर नहीं उसकी।

किसान ने हुक्म दिया, "चल बूढ़े खूँटे पर।"

खूँटे से बाँधकर किसान ने उसे सोटे से यों पीटना शुरू किया कि ठग की आँखों के सामने मौत नाचने लगी। किसान मारता था और पूछता था, "क्यों बूढ़े, मेरा ढाँडा ढाई का ?" और बूढ़ा कराहता हुआ कहता था, "माफ कर। मुझे छोड़ दे।"

हाथ जमाते हुए किसान ने कहा, "तो बता, धन कहाँ रखा है ?" मरता क्या न करता ? बूढ़े ठग ने दबा हुआ धन बताया। किसान ने रुपयों की पोटली बाँधी और अपने गाँव की राह ली।

पूरे पाँच सौ रुपए हाथ लगे। धन तो मिल गया, परन्तु बूढ़े की ठगी का बदला लेने की भावना शान्त नहीं हुई।

उधर लड़के जब आए तो बाप को खूँटे से बँधा पाया। बूढ़े ने रोते-रोते, हाय-हाय करते सारा हाल कह सुनाया। सारे जने मन मारकर रह गए। क्या करें ?

अगले दिन ढाणी में एक हकीमजी आए। बूढ़े ठग को पता चला कि चौपाल में बड़े गुणी हकीमजी आए हैं, तो लड़कों से कहा, "मेरा सारा शरीर उस दुष्ट ने सोटे मार-मारकर तोड़ दिया। हकीमजी से मरहम-पट्टी तो करवा दो।"

लड़कों ने हकीमजी को बुलवाया। हकीम ने शरीर को वहाँ-वहाँ से दबाया जहाँ-जहाँ बूढ़े पर चोटें पड़ी थीं। हकीम कह रहा था, "हम सच्चे गुरु के पहुँचे हुए चेले हैं। हमें पता है ताऊ, तुम्हें कहाँ-कहाँ मार पड़ी है। बड़ा दुष्ट था कोई। बूढ़े शरीर को नहीं देखा। बड़ी पिटाई हुई है तुम्हारी। कोई बात नहीं, मैं देख लेता हूँ।"

हकीम ने नब्ज देखी। दिल पर हाथ रखकर देखा। चोटों को दबाया तो बूढ़ा दर्द के मारे तड़प उठा। कुछ देर विचार-मग्न होकर हकीम ने कहा, "चार तरह की जड़ी-बूटियाँ चाहिए। एक बूटी पूर्व में, दूसरी पश्चिम में, तीसरी दक्षिण में और चौथी उत्तर के जंगल में मिलेगी।"

लड़के बोले, "हम अभी लाए देते हैं। एक-एक जना जाएगा एक-एक दिशा में।"

चारों लड़के चारों दिशाओं में दौड़ पड़े। अब रह गए घर में बूढ़ा ठग और हकीम। हकीम ने दरवाज़े पर साँकल चढ़ाई। हकीम का वेश उतार दिया। बूढ़ा देखकर चीख पड़ा। वही किसान खड़ा था सामने। किसान ने मुस्कराते हुए कहा, "चल बूढ़े खूँटे पर।"

और ज़बर्दस्ती घसीटते हुए वह ले चला ठग को खूंटे पर। किसान रस्सा बाँधकर फिर बूढ़े की पिटाई करने लगा। साथ-साथ पूछ भी रहा था उससे, "क्यों बूढ़े, मेरा ढाँडा ढाई का ?"

बूढ़ा ठग बिलबिला उठा। दो सौ रुपए कहीं दबा रखे थे, वे देकर जान छुड़ाई। किसान दो सौ रुपए लेकर नौ दो ग्यारह हो गया।

लड़के आए तो बूढ़ा फिर खूँटे से बँधा था। अपनी व्यथा फिर सुनाई बूढ़े ने बेटों को। दाँत पीसकर रह गए चारों बेटे। सोच रहे थे—अगर कहीं मिल जाए तो खून पी जाएँ उसका।

उधर किसान सोच रहा था, ठगों को ऐसा पाठ पढ़ाऊँ कि आगे कभी भी किसी भोले-भाले आदमी को न ठगें ! वह फिर गया ढाणी के पास के जंगल में। एक हट्टा-कट्टा चरवाहे का लड़का पशु चरा रहा था। किसान ने उसे कहा, "देख भई पाली ! एक काम कर दे मेरा। वह ढाणी का बूढ़ा ठग है ना, उसके द्वार के सामने जाकर बूढ़े को यह कहकर भाग आ, क्यों बूढ़े, मेरा ढाँडा ढाई का ?"

किसान ने यह भी समझा दिया कि लड़के पीछा करेंगे। हर तरह से पकड़ने का प्रयत्न करेंगे, उनके हाथ मत लगना। अब चरवाहे को क्या चाहिए था ? एक मज़ाक का मज़ाक और साथ में पाँच रुपए की भेंट, जो किसान ने चुपचाप उसे दी थी ! जहाँ तक उसे पकड़ पाने का सवाल था वह तो कोई भी नहीं कर सकता था। एक चरवाहा और ऊपर से साँड़-सी देह। सो चला गया वह ठग के घर के सामने। बूढ़ा सामने ही बैठा मिला। बूढ़े को लक्ष्य कर चरवाहा ने कह दिया, "क्यों बूढ़े, मेरा ढाँडा ढाई का !"

बूढ़ा ज़ोर से चिल्लाया, "फिर आ गया। पकड़ो ! पकड़ो !"

चारों लड़के भागे पीछे। चरवाहा था कि बिजली की-सी तेजी से दौड़ा चला जा रहा था—जंगल की ओर।

उधर किसान फिर आ लिया ठग के घर में। दरवाजा बन्द करके बूढ़े से कहा, 'क्यों बूढ़े मेरा ढाँडा ढाई का ?''

अब तो ठग के प्राण सूख गए। वह सूखे पत्ते की तरह थर-थर काँप रहा था। किसान उसे यम का अवतार लग रहा था। किसान के पाँव पकड़कर रोते हुए दीनता के साथ उसने कहा, ''मुझे क्षमा कर दे। मैं और मेरे बेटे अब कभी ठगी नहीं करेंगे।''

''नाक से तीन लकीर निकाल !''

बूढ़े ने ऐसा ही किया। अब किसान ने न तो उसे मारा और न ही उससे धन माँगा। वह लौट गया। उस दिन के बाद बूढ़े और उसके बेटों ने ठगी छोड़ ही दी।

□□□

देश-विदेश की सचित्र लोककथाएं

हिमाचल की लोककथाएं
बिहार की लोककथाएं
राजस्थान की लोककथाएं
बंगाल की लोककथाएं (पुरस्कृत)
हरियाणा की लोककथाएं (पुरस्कृत)
पड़ोसी देशों की लोककथाएं
असम की लोककथाएं
पंजाब की लोककथाएं
मध्यप्रदेश की लोककथाएं
उत्तर प्रदेश की लोककथाएं

प्रेमचन्द की सरल, सचित्र बाल-कहानियां

परीक्षा
बूढ़ी काकी
सुजान भगत
गुल्ली डंडा
रानी सारन्धा
बड़े घर की बेटी
शतरंज के खिलाड़ी
दो बैलों की कथा
माँ की ममता
शिकारी राजकुमार
मन्दिर
रामलीला
पंच परमेश्वर
रामकथा
मेरी कहानी
नमक का दरोगा
ईद का त्योहार
सबसे बड़ा तीर्थ
कुत्ते की कहानी
जंगल की कहानियां

रवीन्द्रनाथ टैगोर की सरल बाल-कहानियां

भोला राजा
काबुलीवाला
पारसमणि
मास्टरजी
तोते की कहानी
राजा का न्याय

'स्वदेश-परिचय' पुस्तकमाला

डॉ. भगवतशरण उपाध्याय

भारत की कहानी (पुरस्कृत)
भारतीय भवनों की कहानी (पुरस्कृत)
भारतीय संगीत की कहानी (पुरस्कृत)
भारतीय संस्कृति की कहानी (पुरस्कृत)
कितना सुन्दर देश हमारा (पुरस्कृत)
भारतीय चित्रकला की कहानी
भारतीय नगरों की कहानी
भारतीय साहित्यों की कहानी
भारतीय नदियों की कहानी
हमारे पड़ोसी (पुरस्कृत)

ISBN 81-7028-164-7
9788170281645
राजपाल